

"आर. वी." के मामले में, एक न्यायिक अधिकारी

6 अक्टूबर, 2004

[आर. सी. लाहोटी, सीजे, जी. पी. माथुर और प्रकाश प्रभाकर नवलेकर, जे. जे.]

न्याय प्रशासन:

न्यायिक घोषणा में विचारण न्यायाधीश की दोषसिद्धि-का औचित्य-विचारण में देरी के आधार पर कार्यवाही को रद्द करने के लिए धारा 482 सीआरपीसी के तहत अभियुक्त द्वारा याचिका-उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायाधीश-क्षेत्र के खिलाफ टिप्पणियां करने को खारिज कर दिया गया, न्यायिक अधिकारी के खिलाफ टिप्पणियों को अनावश्यक होने के कारण, हटा दिया जाएगा-यह उच्च न्यायालय पर छोड़ दिया गया है कि वह संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करे-भारत का संविधान-अनुच्छेद 235-न्यायिक सूचना।

आपराधिक मुकदमे का सामना कर रहे एक आरोपी ने मुकदमे में देरी के आधार पर कार्यवाही को रद्द करने के लिए एस482 सीआरपीसी के तहत याचिका दायर की। याचिका पर सुनवाई करते हुए उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने 8.4.2001 पर निचली अदालत को 24.4.2001 पर गवाहों से पूछताछ करने के लिए कदम उठाने और मुकदमे को समाप्त करने में देरी के बारे में बताने का निर्देश दिया। जब याचिका को 27.4.2001 पर लिया गया, तो आरोपी याचिकाकर्ता के वकील ने कहा कि निर्दिष्ट तिथि पर केवल 5 गवाहों से पूछताछ की गई थी। अदालत ने याचिका पर दिन के उत्तरार्ध में सुनवाई करने का निर्देश दिया और रजिस्ट्री से इस बीच टेलीफोन पर ट्रायल जज से स्पष्टीकरण मांगने को कहा। टेलीफोन पर प्राप्त जवाब, जो अगले दिन प्राप्त लिखित स्पष्टीकरण का सार था, को अदालत के संज्ञान में लाया गया। अदालत ने याचिका को खारिज करते हुए आदेश के परिचालन भाग में निर्देश दिया कि उच्च

न्यायालय द्वारा 8.3.2001 पर पारित आवश्यक विभागीय कार्यवाही शुरू की जाए " ट्रायल जज के आचरण को देखते हुए 'और' आदेश का पालन नहीं करने के लिए '। ट्रायल जज ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर कर एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांकित न्यायिक आदेश में की गई टिप्पणियों और दिए गए निर्देश को उस हद तक हटाने की मांग की, जिस हद तक वे उनके खिलाफ थे। रिट याचिका खारिज कर दी गई। पीड़ित न्यायिक अधिकारी ने वर्तमान अपील दायर की।

अपील को स्वीकार करते हुए अदालत ने अभिनिर्धारित किया:

1.1. अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों को दोषी ठहराना व्यवस्था के लिए अच्छा नहीं है क्योंकि सार्वजनिक रिकॉर्ड में उन पर लगाए गए आक्षेप न्यायिक संस्थानों में लोगों के विश्वास को हिलाते हैं। [134-ए]

महाबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2001) 7 एस. सी. सी. 148; आर. सी. तामराकर और अन्य बनाम निदी लेखा, [2001] 8 एस. सी. सी. 431 और 'के' एक न्यायिक अधिकारी, [2001] 3 एस. सी. सी. 54 के मामले में भरोसा किया गया।

1.2. अपीलार्थी ने अपने स्पष्टीकरण में लिखित रूप में अपने समक्ष लंबित मामलों की भारी संख्या, गवाहों की संख्या (लगभग 60) की ओर इशारा किया है, जिसे मुकदमे को समाप्त करने से पहले जांच की आवश्यकता थी, अवज्ञाकारी प्रक्रिया सेवारत एजेंसी और फिर से प्रक्रिया जारी करने वाले न्यायालय में अत्यधिक बोझ वाले क्लर्क, और इन सभी के शीर्ष पर कई अभियुक्त व्यक्तियों के लिए उपस्थित होने वाले अलग-अलग वकीलों की संख्या, जो सभी अपनी सुविधा पर अदालत द्वारा समायोजित किए जाने पर जोर देते हैं। स्पष्टीकरण उचित है और 8 मार्च, 2001 को एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए आदेशों का कथित रूप से पालन न करने के कारणों को संतोषजनक रूप से बताता है। यह न्यायिक रूप से ध्यान देने योग्य तथ्य है कि

अधीनस्थ न्यायालयों पर अत्यधिक बोझ होता है और उनसे ऐसे मामलों से निपटने के लिए कहा जाता है जो एक न्यायाधीश द्वारा उचित रूप से संभाले जाने वाले मामलों के अनुपात से पूरी तरह से बाहर हैं। [135-सी, डी, ई]

1.3. दिनांक 1 के आदेश में अपीलार्थी के खिलाफ की गई प्रतिकूल टिप्पणियों और उसमें निहित निर्देश को हटा दिया जाएगा क्योंकि वे अनावश्यक थे और उन्हें न्यायिक आदेश का हिस्सा नहीं बनाया जाना चाहिए था। हालाँकि, यह उच्च न्यायालय पर छोड़ दिया गया है कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत उसे प्रदत्त अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए कोई भी कार्यवाही शुरू करे, लेकिन 27 अप्रैल, 2001 के आदेश में दी गई टिप्पणियों और निर्देश से स्वतंत्र है। [135-एच]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील सं. 1152/2004

एस. बी. सी. आर. एल. एम. पी. सं. 466/2002 में राजस्थान उच्च न्यायालय के दिनांक 10.9.2003 के निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थी के लिए उनके साथ एम. आर. काला, सुनील कुमार जैन और एस. बोरठाकुर।

ए. मारियारपुथम, अरुणा माथुर एम/एस अर्पुथम, अरुणा एंड कंपनी के लिए।

उत्तरदाताओं के लिए मनीष कुमार और अंसार अहमद चौधरी।

न्यायालय का निर्णय सीजे. आर. सी. लाहोटी द्वारा दिया गया। अनुमति दी गई।

हमारे समक्ष अपीलार्थी उच्च न्यायिक सेवा का सदस्य है, जो वर्तमान में फास्ट ट्रैक न्यायालय में अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के रूप में तैनात है। अपीलार्थी, निचली अदालत के पीठासीन न्यायाधीश थे, जहाँ एक अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 467, 468 और 471 के तहत आरोपों पर आपराधिक मामले में (1994 से) मुकदमे

का सामना कर रहा था। वर्ष 2001 में, अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 (संक्षेप में "सीआरपीसी".) के तहत एक याचिका दायर की, जिसमें मुकदमे में देरी के आधार पर कार्यवाही को रद्द करने की मांग की गई। 8 मार्च, 2001 को अभियुक्त द्वारा दायर याचिका की सुनवाई करते हुए उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने एक आदेश पारित कर निचली अदालत को यह सुनिश्चित करने के लिए तुरंत सभी संभव कदम उठाने का निर्देश दिया कि 24 अप्रैल, 2001 को गवाहों से सकारात्मक पूछताछ की जाए। निचली अदालत को यह भी बताने का निर्देश दिया गया कि इतने लंबे समय तक गवाहों को प्रक्रिया क्यों जारी नहीं की गई, जिसके परिणामस्वरूप मुकदमे को लंबा किया गया। सीआरपीसी की धारा 482 के तहत याचिका को लंबित रखा गया था। यह 27 अप्रैल, 2001 को फिर से सुनवाई के लिए आया। ऐसा प्रतीत होता है कि अभियुक्त-याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय के समक्ष शिकायत की थी कि निचली अदालत द्वारा 24 अप्रैल, 2001 को उपस्थित रहने के लिए केवल 20 गवाहों को बुलाया गया था, जिनमें से केवल 5 गवाह उपस्थित हुए और उनसे पूछताछ की गई, जबकि अगली तारीख 29 मई, 2001 निर्धारित की गई थी। याचिका की सुनवाई करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश ने 8 मार्च, 2001 को निर्देशित शर्तों में निचली अदालत के पीठासीन न्यायाधीश से स्पष्टीकरण नहीं मिलने पर आक्रोश महसूस किया। मामले को सुनवाई के लिए दिन के पहले भाग में लिया गया था। रजिस्ट्री को निर्देश दिया गया कि वह जल्दबाजी में सुनवाई के बाद निचली अदालत के पीठासीन न्यायाधीश से टेलीफोन पर स्पष्टीकरण मांगे और मामले को दिन के उत्तरार्ध में यानी दोपहर के भोजन के बाद उठाने का निर्देश दिया गया। टेलीफोन पर प्राप्त और उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के संज्ञान में लाई गई मौखिक प्रतिक्रिया उस स्पष्टीकरण का सार थी जो अगले दिन लिखित रूप में प्राप्त हुआ था। निचली अदालत के पीठासीन अधिकारी ने

समझाया कि जिन गवाहों से पूछताछ की जानी थी, उन्हें समन निर्धारित तिथि यानी 24 अप्रैल, 2001 को साक्ष्य दर्ज करने के लिए समय पर जारी किया गया था। हालांकि, केवल 5 गवाह सामने आए और उनके बयान दर्ज किए गए। कुल मिलाकर 60 गवाहों से पूछताछ की जानी थी। निचली अदालत ने उन्हें सुनवाई की 3 तारीखें यानी 29 मई, 2001 12 जून, 2001 और 26 जून, 2001 निर्धारित करके तलब करने का निर्देश दिया था। 29 मई, 2001 की तारीख ऐसे गवाहों से पूछताछ करने के लिए निर्धारित की गई थी जो 24 अप्रैल, 2001 को पेश होने में विफल रहे थे, जबकि शेष दो तारीखें प्रत्येक तारीख को 20 गवाहों से पूछताछ करने के लिए निर्धारित की गई थीं। जहाँ तक प्रक्रिया जारी न किए जाने (और गवाहों से पूछताछ न किए जाने) का संबंध है, निचली अदालत द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण के निम्नलिखित भाग को निकालना और पुनः प्रस्तुत करना उपयोगी होगा: -

"प्रक्रिया को पहले जारी नहीं करने के लिए संबंधित क्लर्क से स्पष्टीकरण मांगा गया था। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य को बंद करने के लिए अभियुक्त के आवेदन के बीच, कुल 11 सुनवाई हुई। जिसमें से तीन तारीखों के लिए प्रक्रिया जारी की गई थी। क्लर्क ने समझाया कि अधिक काम के बोझ के कारण प्रक्रिया जारी नहीं की जा सकी। क्लर्क को प्रक्रिया जारी करने के लिए सख्त निर्देश दिए गए हैं।

पुलिस द्वारा प्रक्रिया को वापस न करने के कारण भी मामले पर निर्णय लेने में देरी हुई। माननीय उच्च न्यायालय के आदेशों का संकेत देने पर, 24.4.2001 दिनांकित प्रक्रिया के साथ पत्र जारी करते समय, 13 प्रक्रियाएं पूरी की गईं। जिनमें से पाँच गवाह उपस्थित थे जिनके साक्ष्य दर्ज किए गए थे।

महोदय, इस न्यायालय में पहले से ही लगभग चार हजार मामले लंबित थे। वर्तमान में लगभग दो हजार पाँच सौ मामले लंबित हैं। अलग-अलग काम बहुत ज़्यादा

रहते हैं। इस मामले में आरोपी के लिए चार अलग-अलग वकील हैं। इसके लिए न्यायालय को एक बार में उनकी उपस्थिति के लिए अधिक समय बिताना पड़ता है।

पुलिस द्वारा प्रक्रिया की वापसी भी असंतोषजनक है। कई बार प्रक्रियाएँ वापस नहीं की जाती हैं। प्रक्रिया को वापस करने में भी, विवरण अधूरे भेजे जाते हैं। इन परिस्थितियों के बाद भी, श्रीमान, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मामलों को तय करने में, जल्द से जल्द निपटारे के लिए हर कदम उठाया जाएगा।

27 अप्रैल, 2001 को उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभियुक्त द्वारा वरीयता दी गई सीआरपीसी की धारा 482 के तहत याचिका को खारिज करने का निर्देश दिया। हालाँकि, आदेश के संचालन भाग में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने महापंजीयक को निर्देश दिया कि वे निचली अदालत के पीठासीन न्यायाधीश के खिलाफ आवश्यक विभागीय कार्यवाही शुरू करें जो निचली अदालत के न्यायाधीश के आचरण को देखते हुए और 8 मार्च, 2001 को उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का पालन नहीं करने के लिए आज तक अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं करने और मुकदमे में भारी देरी के लिए है। आदेश की एक प्रति संबंधित न्यायाधीश की व्यक्तिगत फाइल में रखने का निर्देश दिया गया था।

अधीनस्थ न्यायाधीश के पास कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था, उन्होंने उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियों और दिए गए निर्देश को उस हद तक हटाने की मांग की गई थी, जिस हद तक उन्हें उनके खिलाफ निर्देशित किया गया था। याचिका का निपटारा उच्च न्यायालय के एक अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश द्वारा किया गया है, जिन्होंने कहा है कि विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा अपनी याचिका में जो स्पष्टीकरण देने की मांग की गई थी, वह उनके खिलाफ शुरू की जाने वाली

अनुशासनात्मक कार्यवाही में बचाव के रूप में स्थापित करने के लिए उपलब्ध था और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि 27 अप्रैल, 2001 के उच्च न्यायालय के आदेश के परिणामस्वरूप कोई स्पष्ट अन्याय होगा या यह किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। व्यथित महसूस करते हुए, अधीनस्थ न्यायिक अधिकारी ने विशेष अनुमति द्वारा यह अपील दायर की है।

उच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय के पंजीयक द्वारा निर्देशित एक वकील के माध्यम से उपस्थिति दर्ज कराई है। उच्च न्यायालय के पंजीयक (रिट) द्वारा शपथ लिए गए एक जवाबी हलफनामे को अपील करने के लिए विशेष अनुमति के लिए याचिका को चुनौती देते हुए दायर किया गया है।

हमने अपीलार्थी-न्यायिक अधिकारी के विद्वान वरिष्ठ वकील के साथ-साथ उच्च न्यायालय के विद्वान वकील को भी सुना है। हम संतुष्ट हैं कि उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा कई घोषणाओं में निर्धारित कानून के विपरीत है और इसलिए इसे दरकिनार किया जा सकता है।

इस न्यायालय ने बार-बार अधीनस्थ न्यायपालिका को उच्च न्यायालय के अनुशासनात्मक, प्रशासनिक और न्यायिक नियंत्रण में रखने की आवश्यकता पर जोर दिया है। हालाँकि, साथ ही इस न्यायालय ने उच्च न्यायालयों को पर्यवेक्षण की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए संयम, देखभाल और चौकसी की आवश्यकता पर जोर देते हुए आगाह किया है ताकि दूसरों को न्याय देने वालों को स्वयं अन्याय का सामना करना न पड़े। केवल कुछ ही निर्णयों का संदर्भ देना पर्याप्त होगा। महाबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2001) 7 एस. सी. सी. 148 में, इस न्यायालय ने न्यायिक संयम बनाए रखने और (पुलिस और) अधीनस्थ न्यायपालिका के अनावश्यक दंड से बचने की आवश्यकता पर जोर दिया। आर. सी. तामराकर और अन्य बनाम निदी लेखा, (2001)

8 एस. सी. सी. 431 में पहले के कई मामलों में अपनी टिप्पणियों को दोहराते हुए इस न्यायालय ने कहा कि न्यायिक संयम प्रत्येक न्यायिक व्यवस्था का एक गुण है। न्यायिक पदानुक्रम में उन त्रुटियों को ठीक करने के लिए उच्च स्तर प्रदान किए जाते हैं जो संभवतः निचले स्तरों पर अदालतों के निष्कर्षों, आदेशों या कार्यवाही में हो सकती हैं। उन्होंने कहा, "इस तरह की शक्तियां निश्चित रूप से निचले संवर्ग में न्यायिक व्यक्तियों को अपमानित करने के लिए नहीं हैं। एक न्यायविद के शब्दों को याद रखना अच्छा है कि एक न्यायाधीश जिसने कोई गलती नहीं की है, उसका अभी जन्म होना बाकी है। अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों को दंडित करना व्यवस्था के लिए अच्छा नहीं है क्योंकि सार्वजनिक रिकॉर्ड में उन पर लगाए गए आक्षेप, न्यायिक संस्थानों में लोगों के विश्वास को हिलाते हैं। इस तरह की टिप्पणियाँ, यदि टालने योग्य और अनावश्यक हैं, तो अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों को टिप्पणियों को हटाने के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए मजबूर करती हैं, जो कि दुर्भाग्यपूर्ण है।

'के' एक न्यायिक अधिकारी [2001] 3 एससीसी 54 के मामले में, भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली एक पीठ को इस तरह के मुद्दे को बहुत सारे विवरणों और कई कोणों से निपटाने का अवसर मिला था। इस न्यायालय ने उच्च न्यायालयों को याद दिलाया कि अधीनस्थ न्यायपालिका पर उन्हें निहित पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार का उपयोग एक मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक के रूप में किया जाना था। उच्च स्तरों में निहित शक्ति एक चाबुक की तरह या निचले स्तरों में उन लोगों द्वारा की गई गलतियों या विफलताओं पर प्रतिशोध के साथ प्रयोग करने के लिए नहीं है जो प्रणाली के लिए अच्छा नहीं है, बल्कि प्रणाली को टोन करने के उद्देश्य से प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि गलतियों, त्रुटियों या विफलताओं को दोहराया न जाए जो अनजाने में या अज्ञानता में की गई हो। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से उन परिणामों की गणना की जो अधीनस्थ न्यायपालिका पर तब होते हैं जब उच्च न्यायालय अपने सदस्यों को



दंडित करने में लिप्त होते हैं, जो कभी-कभी न्यायिक शक्ति के प्रदर्शन के लिए अनावश्यक होता है। इस न्यायालय ने इस बात का ध्यान रखा कि उसकी टिप्पणियों को गलत नहीं समझा जा सकता है और एक वैकल्पिक, सुरक्षित और सलाह योग्य मार्ग का सुझाव दिया ताकि अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों के लिए न्यायसंगत और निष्पक्ष हो, जिनका आचरण या व्यवहार न्यायिक पक्ष की सुनवाई के दौरान ध्यान में आया और उच्च न्यायालय की मंजूरी के अनुरूप नहीं था। इस न्यायालय ने सुझाव दिया: -

"एक न्यायिक अधिकारी का आचरण, जो उसके अयोग्य है, न्यायिक पक्ष में किसी मामले की सुनवाई करने वाले उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के ध्यान में आने के बाद, इसका निपटारा उसके गुण-दोष के आधार पर किया जा सकता है जैसा कि उसने पाया है, लेकिन न्यायिक घोषणा में उस अधीनस्थ न्यायिक अधिकारी की आलोचना या टिप्पणियों से बचना, जिसने जांच के तहत मामले का फैसला किया था। साथ ही, मुख्य न्यायाधीश को एक गोपनीय पत्र या नोट भेजकर संबंधित अधीनस्थ न्यायाधीश के आचरण का वर्णन करने वाले तथ्यों की ओर माननीय मुख्य न्यायाधीश का ध्यान आकर्षित करने के लिए अलग से कार्यालय की कार्यवाही तैयार की जा सकती है। इसके बाद मुख्य न्यायाधीश के लिए यह खुला रहेगा कि वह अधीनस्थ न्यायिक अधिकारी के साथ या तो अपने स्तर पर या निरीक्षण करने वाले न्यायाधीश के माध्यम से या मामले को पूर्ण न्यायालय के समक्ष विचार के लिए रखे। इस प्रकार की गई कार्रवाई प्रशासनिक पक्ष में होगी। संबंधित अधीनस्थ न्यायाधीश के पास अपनी स्थिति स्पष्ट करने या उन परिस्थितियों को सामने रखने का

अवसर होगा जिनके तहत उन्होंने कार्य किया था। बिना सुने उनकी निंदा नहीं की जाएगी और यदि निर्णय उनके लिए प्रतिकूल होगा, तो यह प्रशासनिक पक्ष होने के कारण, उनके पास कानून के तहत कुछ उपाय उपलब्ध होंगे। उसे बिना उपाय के प्रस्तुत नहीं किया जाएगा।"

वर्तमान मामले के तथ्यों पर वापस आते हुए, हमारी राय है कि 27 अप्रैल, 2001 के आदेश को पारित करने वाले उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने शायद वे टिप्पणियां नहीं की होतीं और विभागीय जांच शुरू करने का निर्देश दिया होता, अगर वह केवल एक दिन के लिए इंतजार करते जब निचली अदालत के पीठासीन न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत लिखित और विस्तृत स्पष्टीकरण उनके सामने उपलब्ध होता। यह एक न्यायिक रूप से ध्यान देने योग्य तथ्य है कि अधीनस्थ अदालतें अत्यधिक बोझ से ग्रस्त होती हैं और उनसे ऐसे मामलों से निपटने के लिए कहा जाता है जो एक न्यायाधीश को उचित रूप से संभालने के अनुपात से पूरी तरह से बाहर हैं। फिर भी वे अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करते हैं। अपीलार्थी ने अपने स्पष्टीकरण में अपने समक्ष लंबित मामलों की भारी संख्या, गवाहों की संख्या (लगभग 60) की ओर इशारा किया है, जिनसे मुकदमे को समाप्त करने से पहले पूछताछ करने की आवश्यकता थी, अड़ियल प्रक्रिया सेवारत एजेंसी और फिर से अदालत में अत्यधिक बोझ वाले क्लर्क प्रक्रिया-समन और वारंट जारी करते हैं, और इन सभी के शीर्ष पर कई अभियुक्त व्यक्तियों के लिए उपस्थित होने वाले अलग-अलग वकीलों की संख्या, जो सभी अपनी सुविधा पर अदालत द्वारा समायोजित किए जाने पर जोर देते हैं। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी अनुचित जल्दबाजी में काम किया क्योंकि उन्होंने उसी दिन विचारण न्यायाधीश से स्पष्टीकरण मांगने पर जोर दिया और वह भी टेलीफोन पर। 28 अप्रैल, 2001 का स्पष्टीकरण, हमारी राय में, तर्कसंगत है और 8 मार्च, 2001 को

विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए आदेशों के कथित गैर-अनुपालन के कारणों को संतोषजनक रूप से बताता है।

उच्च न्यायालय को अपने आक्षेपित आदेश में 27 अप्रैल, 2001 के आदेश में निहित टिप्पणियों को हटाने और अपीलार्थी के लिए प्रतिकूल होने का निर्देश देना चाहिए था।

अपील की अनुमति दी जाती है। अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्य आर. वी. द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दायर और आक्षेपित आदेश द्वारा निपटाई गई याचिका स्वीकार्य होगी। 27 अप्रैल, 2001 के आदेश में अपीलार्थी के खिलाफ की गई प्रतिकूल टिप्पणियों और उसमें निहित निर्देश को हटा दिया जाएगा।

अलग होने से पहले, हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमने टिप्पणियों को हटाने और न्यायिक आदेश में निहित निर्देशों को दरकिनार करने का निर्देश दिया है क्योंकि हम सोचते हैं कि वे अनावश्यक थे और न्यायिक अधिकारी को सुनवाई का अवसर दिए बिना न्यायिक आदेश का हिस्सा नहीं बनाया जाना चाहिए था। हालाँकि, यह आदेश उच्च न्यायालय के रास्ते में नहीं आएगा यदि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत उसे प्रदत्त अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए कोई कार्यवाही शुरू करने का विकल्प चुनता है, लेकिन 27 अप्रैल, 2001 के आदेश में दी गई टिप्पणियों और निर्देश से स्वतंत्र है।

आर. पी.

अपील को अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।

अस्वीकरण - इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।